भारतीय संस्कृति: विविधता और विरासत का विश्लेषणात्मक अध्ययन

डॉ. राजीव रंजन
इतिहास एवं संस्कृति विभाग
राजकीय महाविद्यालय, नीमकाथाना, राजस्थान.

संक्षेप

भारतीय संस्कृति विश्व की प्राचीनतम और बहुआयामी संस्कृतियों में से एक है, जिसकी संरचना विविधता, विरासत और निरंतर परिवर्तनशीलता पर आधारित है। यह संस्कृति न केवल अपने ऐतिहासिक मूल्यों और परंपराओं में समृद्ध है, बल्कि सामाजिक, धार्मिक, भाषाई और कलात्मक विविधताओं के संगम से विकसित हुई है। भारत के विभिन्न क्षेत्रों में प्रचलित रीति-रिवाज़, मान्यताएँ, वेशभूषा, भोजन, कला और भाषा की भिन्न-भिन्न शैलियाँ एक ऐसी सांस्कृतिक मोज़ाइक का निर्माण करती हैं, जो इसकी विशिष्ट पहचान को रूप प्रदान करती हैं। भारतीय संस्कृति का मूल आधार आध्यात्मिकता, सह-अस्तित्व, सहिष्णुता और मानव कल्याण की भावना में निहित है, जिसने इसे सदियों से एकजुट बनाए रखा है। भारत की सांस्कृतिक विरासत में वेद, उपनिषद, पुराण, रामायण, महाभारत जैसे शास्त्रीय ग्रंथों के साथ-साथ संगीत, नृत्य और स्थापत्य कला की विविध परंपराएँ शामिल हैं, जो इसकी बौद्धिक और कलात्मक समृद्धि को प्रकट करती हैं। समय के साथ सामाजिक परिवर्तन, वैश्वीकरण, विज्ञान, तकनीक और आधुनिक जीवनशैली ने संस्कृति में नए आयाम जोड़े हैं, जिससे पुरातन और आधुनिक के बीच एक रचनात्मक संतुलन विकसित हुआ है। यह परिवर्तनशीलता भारतीय संस्कृति को जीवंत और प्रासंगिक बनाए रखती है। समग्र रूप से, भारतीय संस्कृति एक ऐसी जीवन शैली का प्रतिनिधित्व करती है जो विविधता में एकता, निरंतर विकास और मानवीय मूल्यों के संरक्षण का आदर्श प्रस्तुत करती है।

कीवर्ड: विविधता, विरासत, परिवर्तनशीलता, भारतीय संस्कृति

परिचय

उत्तरी गोलार्द्ध में सालों भर हिम आच्छादित विशालतम एवं सर्वोच्च पर्वत श्रृंखला हिमालय के दक्षिण में घिरा देश युग युगीन सभ्यता का देश है - आर्यावर्त। प्राचीन काल में इस उप महाद्वीप को जम्बूद्वीप (जम्बू वृक्षों का महाद्वीप) तथा भारतवर्ष (पौराणिक गाथा का चक्रवर्ती सम्राट भरत के पुत्रों का देश) के नाम से पुकारा गया है। हिमालय की वो महान सरिताओं यथा सिन्धु एवं गंगा द्वारा आदि काल से ऋर्षियों, महर्षियों, यतियों एवं महापुरूषों की यह पावन भूमि सिंचित होती रही है। ,'स' वर्ण के उच्चारण में कठिनाई होने के कारण फारस वालों ने सिंन्धु को हिन्दू नदी पुकारा और कालान्तर में इस देश को मुगलों ने हिन्दुस्तान की संज्ञा दी। यूरोपीय आक्रांताओं ने इसी सिन्धु नदी को इंडस (प्दकने) तथा इस विषाल भूभाग वाले राष्ट्र को इंडिया कह कर पुकारा।

प्रकृति ने यहाँ दो विपरीत ध्रुवों वाली भौगोलिक भिन्नता प्रदान की है। उत्तर में बर्फ से ढ़की पर्वत श्रेणियाँ और यूरोप के ठंडे प्रदेश से साम्यता रखने वाला क्षेत्र कश्मीर है तो यहाँ दक्षिण में कठोर चट्टानों वाले पहाड़ तथा प्रायःद्वीपीय भाग को तीन तरफ से घेरे हुए अथाह असीम सागर, फिर ठाठे मारता उनका खारा पानी। पुनः इसी क्रम में इनसे लगने वाला रमणीय समुद्र-तट जिसकी तरफ पर्यटक यंत्रवत खिंचे चले आते हैं। पूरब में घनघोर वर्षा का विश्व रिकार्ड कायम करने वाला क्षेत्र चेरापुंजी और उसके आस-पास के क्षेत्र हैं तो अरब के वीरान मरूस्थल की तरह 'थार क्षेत्र' (राजस्थान), जहाँ बरसाती बादलों के ठठ के ठठ बिना बरसे तैरते ललचाते चले जाते हैं, और कभी बरसे भी तो नाम मात्र को। गंगा के समतल एवं उपजाऊ मैदान को भारतीय का समतल मैदान एवं लोहा, कोयला एवं अन्य अयस्कों की प्रचुरता के कारण छोटा नागपुर के पठारी क्षेत्र को भारत का रूर क्षेत्र (Ruhr province of India) कहा जाय तो कोई अतिषयोक्ति नहीं होगी।

यहाँ विभिन्नता भौगोलिक क्षेत्र तक हीं सीमित नही ंहै, वर्ण-जाति, कद-काठी, नाक-नक्ष, रहन-सहन, परिधान-आभूषण, धर्म-दर्शन, भाषाप्रथा आदि में स्वभावगत भिन्नता स्पष्ट नजर आती है। कोई विदेशी देखे तो कह उठे - यह □□□ है या -एक 'सजीव, सचल नृसंग्रहालय।' मगर इन तमाम विभिन्नताओं के बावजूद हम ठीक उसी प्रकार हैं, जैसे की खरबूजा। बाहर से तो विभाजित प्रतीत होता है मगर अंदर से कोई भिन्नता नहीं है , हम एक है। हम यूरोपीय देशों की तरह नहीं है जहां लोगउस बाहर से तो बिल्कुल संतरे की भांति चिकना समतल और अविभाजित हैं मगर अंदर से खंड- खंड में विलग। अगर एक पंक्ति में कहा जाए तो - 'यहाँ अनेकत्व में एकत्व है।'' उदाहरण द्वारा हम कह सकते है जिस प्रकार विभिन्न नाम वाली नदियाँ अंततः समुद्र में मिलकर एक हो जाती है।

स यथा सर्वसामपां समुद्र में कायनम्

ठीक उसी प्रकार 140 करोड़ भारतीय राष्ट्ररूपी समुद्र में समाहित हो एकाकार हो जाते है -

भारत की युग-युगीन सभ्यता मिश्र मेसोपोटामिया, रोम तथा यूनान की सभ्यता से इस दृष्टि से भिन्न है कि इसकी परम्पराएं आज तक अविचिछन्न रूप से सुरक्षित रखी गई है। इसकी वजह है सतत एवं अविराम रूप से एक पीढ़ी के लोगों द्वारा भावी पीढ़ी को अपने संस्कार और रीति रिवाज हस्तान्तरित होती रही है। परिणाम यह है कि हम आज भी उन्हीं संस्कारों रीति-रिवाजों का पालन करते हैं। रोजमर्रा की जिदंगी में वही भोजन करते हैं, जो सहस्त्रों वर्षों पूर्व हमारे पूर्वज करते रहे हैं। सदियों के व्यतीत होने के बावजूद मूलरूप से भी क्रिया-कलापों, धार्मिक विश्वासो एवं ईष्वर के प्रति आस्था व्यक्त करने के हमारे ढ़ंग में कोई परिवर्तन नहीं आया है। काल के थपेड़ों के बावजूद मूल रूप से कोई परिवर्तन नहीं होने का कारण इस संस्कृति का सुदृढ़ आधार पर आधारित होना तथा विराट सांस्कृतिक चेतना से बंधा अनुशासन है।

भारतीय संस्कृति मानव के सर्वांगीण विकास पर बल देती है। शारीरिक व मानसिक क्षमता के उत्कर्ष के लिए प्रेरणा देती है। जबकि अन्य संस्कृतियां किसी एक तत्व के उत्कर्ष पर आग्रह करती है। उदाहरण के लिए स्पार्टा नगर को लिया जा सकता है। स्पार्टा में शारीरिक विकास ही सबकुछ था इस कारण स्पार्टा में केवल शारीरिक शक्ति के वीर ही पनप पाते थे। इसके परिणामस्वरूप संसार को 'लियोनीडास' व उसके वीर सिपाही तो अवश्य प्राप्त हुए जिन्होंने अपनी वीरता से 'थर्मोपली के युद्ध' को अमर बना दिया, किन्तु मानसिक व आत्मिक विकास की दृष्टि से उन्होंने समय पर अपनी कोई छाप नहीं छोड़ी व मावन विकास में अपना हाथ नहीं बटाया। एथेन्स की संस्कृति में मानसिक विकास पर अधिक जोर दिया गया था। रोम, मिस्र और बेबिलोन आदि की प्राचीन संस्कृतियों में भी यही अधुरापन दिखता है। इसीलिए वे संस्कृतियाँ काल की कसौटी पर सच्ची न उतर सकीऔर काल के गाल में समाहित हो गयीं ।

वे आज केवल स्मर्तब्य हीं शेष हैं। यूरोप की आधुनिक संस्कृति भी सर्वांगीण नहीं है। आत्मिक शक्ति को तो उसने पहचाचना भी नहीं सीखा। स्वार्थ से प्रेरित होकर वह भौतिक चकाचौंध मे अंधी हुई जाती है व उसने आसुरी सम्पत्ति का मायाजाल चारों ओर फैला दिया है। इसके विपरीत भारतवर्ष की प्राचीन संस्कृति की ओर यदि दृष्टिपात करें तो वह मानव के सर्वांगीण विकास को महत्व प्रदान करती है और परिणाम यह है कि हम आज भी बने हुए हैं। अलम्मा इकबाल के शब्दों में कहा जाये तो -

यूनान मिस्र रोमां सब मिट गए जहाँ से । अब तक मगर है बाकी नामों निशा हमारा।।
कुछ बात है कि हस्ती मिटती नहीं हमारी। सदियों रहा है दुश्मन दौरे जहाँ हमारा।।

भारतीय संस्कृति ने अपनी बहुमूल्य विशेषताओं के कारण देवभूमि का दर्जा पाया है! □□□□□गुरू के विशेषण से यह अलंकृत हुआ और आज समस्त विश्व के आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है। संभवतः यही कारण है कि भारतीय संस्कृति से पूर्णरूपेण प्रभावित जर्मन विद्वान मैक्स मूलर, जिन्होंने अपने नाम का भारतीयकरण कर 'मोक्षमूल' रख लिया था, ने कहा कि - यदि हम सम्पूर्ण विश्व की खोज करें एक ऐसे देश का पता लगाने के लिए जिसे प्रकृति ने सर्वसम्पन्न शक्तिशाली एवं सुन्दर बनाया है तो मैं भारतवर्ष की तरफ संकेत करूंगा। यदि मुझसे पूछा जाए कि किस आकाश के नीचे मानव मस्तिष्क ने मुख्यतः अपने गुणों का विकास किया, जीवन की सबसे महत्वपूर्ण समस्या पर सबसे अधिक गहराई के साथ सोंच विचार किया और कुछ ऐसे रहस्य ढूढ़ निकाले जिनकी ओर से उन्हें भी ध्यान देना चाहिए जिन्होंने प्लेटों और काण्ट का अध्ययन किया है तो मैं भारतवर्ष की ओर संकेत करूंगा। यदि मैं अपने आप से पूछूं कि किस साहित्य का आश्रय लेकर हम यूरोपीय, जो बहुत कुछ केवल यूनानियों रोमनों एवं एक सेमेटिक जाति के यानि यहुदियों के विचार के साथ पले हैं, वह सुधारक माध्यम पा सकते हैं, जिसकी हमे अपने जीवन को अधिक पूर्ण, अधिक विस्तृत और अधिक व्यापक बनाने के लिए आवष्यकता है - न

केवल इस जीवन के लिए अपितु एकदम बदलते हुए और अनन्त जीवन के लिये, तो मैं भारतवर्ष की ओर संकेत करूंगा।''

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैष्य और शुद्र नाम से भारतवर्ष में मनुष्यों का विभाजन हुआ। उसकी प्रतिध्वनि अफलातून की - 'रिपब्लिक में सुनायी देती है जहाँ उसने समाज को तीन भागों (Guardians, Auxillaries ,Craftsmen) में बाँटने की बात की है। यह आश्चर्य की बात है कि जैसे भारत में चार वर्ण ब्रह्मा से उत्पन्न बताये गए है (मुख से ब्राह्मण, भुजा से क्षत्रिय, जंघा से वैष्य तथा पैरों से शुद्र) वैसे ही सुकरात भी उन्हें परम पुरूष से उत्पन्न बताता है। प्लाटिनस ने ईष्वर का वर्णन नेति-नेति कहकर किया है, जो फिर उपनिषदों के नेतिवाद से प्रभावित दिखता है। चतुरंग का प्राचीन भारतीय खेल अरब होकर यूरोप में 'शतरंज' के रूप में पहुँचा। भारत में इस खेल का उल्लेख हमें हर्षवर्द्धन काल में बाणभट्ट की रचना में मिलती है। एक से नौ तक के अंक शून्य का गणित सम्बन्धी महत्व सभी चीजों का आविष्कार भारत में ही हुआ। दशमलव पद्धति जो आधुनिक गणित का आधार है भारत में पांचवीं शताब्दी में विकसित हुई थी । इसी काल में अरबी दुनियां में प्रविष्ट हई और नवीं शताब्दी में गणिज्ञत अल ख्वारिज्मी द्वारा इस क्षेत्र में लोकप्रिय बनाया गया। बारहवीं शताब्दी में अलेबार्ड नामक भिक्षु ने इस प्रणाली से यूरोपवासियों को परिचित कराया जो अरबी संख्यांक पद्धति के नाम से जानी जाती है। मगर आश्चर्य □□ अरब वाले स्वयं इसे 'हिन्दसा' कहते हैं। आर्यभट्ट के 'सूर्य-सिद्धान्त' के बारे में यह माना जाता है कि उसने त्रिकोणमिति का ऐसा उन्नत रूप दिया जो तत्कालीन यूनान की अनुमान के भी बाहर था। चिकित्सा के क्षेत्र मे ंतो प्राचीन विश्व में, शायद भारत सबका गुरू था। सुश्रुत (ई. पू. पाँचवीं सदी) चरक (दूसरी सदी) वाग्भट्ट (छठी सदी) और भावमिश्र (1530 ई.) ये आयुर्वेद के चार प्रधान आचार्यों के नाम हैं, शरीर विज्ञान और औषधी विज्ञान की इस देश में बहुत उन्नत की। शल्य चिकित्सा के यहाँ कोई सवा नौ सौ औजार एवं उपकरण प्रचलित थे और गैरिसन का कहना है कि ऐसा कोई भी बड़ा ऑपरेशन नहीं था जिसे प्राचीन शल्य चिकित्सक सफलतापूर्वक नहीं कर सकते थे। हेवेल ने लिखा है कि, खलीफा हारून रशीद भारत की चिकित्सा पद्धति का पूरा कायल था और अपने राज्य में अस्पतालों का संगठन करने के लिये, उसने भारत से अनेंको वैद्य बुलवाये थे। लाला लाजपतराय ने अपनी ''अन हैप्पी इंडिया' में लार्ड एम्पथिल का यह मत उद्धृत किया है कि 'मध्यकालीन तथा अर्वाचीन यूरोप को चिकित्सा सम्बन्धी सारा ज्ञान अरबों से मिला था और अरबों को भारत से। 'बेतार के तार'(wireless)का आविष्कार हमारे देश के वैज्ञानिक जगदीश चन्द्र बोस ने ही की थी परंतु उसी वक्त मारकोनी को भी इसी में सफलता मिली और यूरोपीय होने के कारण इसका श्रेय मारकोनी को जाता है।

युग पुरुष कीपरिकल्पना भारत की ही देन है ।यहां हर युग में एक महापुरूष ने जन्म लिया है। राम, कृष्ण, बुद्ध, नानक, गाँधी इसके उदाहरण रहे हैं। लोकमानस इनके सात्विक जीवन शैली को अपना

आदर्श मानते रहे हैं तथा उन्हें उन्हें शास्त्रानुमोदित मर्यादाओं के प्रतिपालक के रूप में देखते हैं। इस प्रकार की गाथाएं ईश्वरीय आदेशो द्वारा ऐतिहासिक चाक्षुस क्रियानवयन होती है। गीता में तो कृष्ण ने स्वयं अपने मुख से कहा है -

यदा यदा ही धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत। अभ्युत्थानं धर्मस्य तदात्मानंः श्रृजाम्यहम्।।

परित्राणाय साधुनां विनाषाय च दुष्कृताम। धर्मसंस्थापनार्घाय संभवामि युगे युगे।।

अर्थात् हे अर्जुन! (अर्जुन भरतवंषी) जब-जब धर्म की हानि होगी, अधर्म का उत्थान होगा तब-तब मैं आत्मसृजन करूंगा। साधुओं की रक्षा और दुष्टों का विनाश तथा धर्म की स्थापना के लिये मैं हर युग में उत्पन्न होता हूँ।

दूसरे के अधिकारों का हनन या विदेशो पर आक्रमण करना हमारी रगों में नही रहा है। मगर इतिहास इस बात का साक्षी रहा है कि हमारा देश आक्रांताओं द्वारा अक्सर पदाक्रांत होता रहा है। मगर आष्चर्य होता है जो भी आक्रमणकारी आए यहीं के होकर रह गए। दूसरे शब्दों में कहा जाए तो हमारे देश में विभिन्न बाह्य संस्कृतियां आई और यहाँ घुल मिलकर एकाकार हो गई। हर प्रजाति ने भारतीय सामाजिक व्यवस्था, शिल्पकला, वास्तुकला एवं साहित्य के विकास में यथाशक्ति अपना योगदान दिया। यहाँ आने वाली प्रमुख विदेशी जातियों यूनानी, शक, कुषाण, हूण, तुर्क, मंगोल, मुगल, पुर्तगाली और अंततः अंग्रेज आदि का बारी-बारी से आगमन हुआ। मगर उपरोक्त सबों का इस मिट्टी में स्वतः समागम होता गया। सबों का पोषण हुआ और सबों के अच्छे विचारों को सहर्ष स्वीकारा गया। क्योकिं ऋग्वेद लिखतथा है -

आ नो भद्राः ऋतवों यन्तु विश्वत:

(विश्व के हर कोने से आए अच्छे विचारों का हम स्वागत करते हैं)

विश्व बन्धुत्व की भावना, भारतीय संस्कृति की प्रमुख विषेषता रही है। विशाल हृदयी हमारे पूर्वजों ने समस्त पृथ्वी (वसुधा) को ही अपना परिवार समझाा और 'वसुधैव कुटुम्बकम' की भावना को चरितार्थ किया। विश्व कल्याण की भावना से हम सदा वशीभूतव रहे हैं। हमारे सभी धर्मग्रन्थों का एक हीं सार है जो सर्व कल्याणकारी है वह करणीय है, सर्वभूत रत रहो। आदि देव शिव का शब्दीक अर्थ ही 'कलयाणकारी ' होता है। हमारी कामना सदा यही रही है कि -

सर्वे भवनतु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः।

सर्वे भद्राणि पष्यन्तु मा कष्चित दुख भाग्भवेत्।।

(सभी सुखी रहे, सभी नि:रोग रहें सभी अपने प्रियजनों को देखे किसी को कोई दुःख न हो)

यहां परहित का स्थान सर्वोपरि तथा अतिथि का स्थान देवतुल्य कहा गया है। उसे घर का सर्वोत्तम कमरा ठहरने के लिए, उत्तम पकवान खाने के लिए और यथासंभव हर प्रकार की सुख सुविधा उपलब्ध कराई जाती रही है। इसके पीछे धारणा यह रही है कि - अतिथि देवो भव: (अतिथि देव तुल्य है।)

भारतीय संस्कृति का दृष्टिकोण उल्लासमय, आशावादी एवं सदगामी रहा है। घनघोर निराशा में डूबा हुआ व्यक्ति उम्मीद की सिर्फ एक किरण के सहारे और अपने अथक परिश्रम एवं लगन से विपत्तियों एवं विघ्नों पर विजय पाता रहा है क्यों कि यह सर्वविदित है कि -

आशा ही परमं ज्योति, नैरश्यं परम तम:

तमसो मा ज्योतिर्गमय

यहां सदा से सत् पथगामी होने की सलाह दी जाती है ताकि उपनिषद कार ऋषियों की शिक्षाओं की पूर्ति होती रहे

तमसो मा ज्योतिर्गमय,

असतो मा सद्गमय

मृत्योर्मा अमृत गमय।

(असत से सत्, अन्धकार से प्रकाश तथा मृत्यु से अमरत्व की ओर प्रयाण हो)

दानशीलता, उदारता, समन्यवयवादिता सहिष्णुता तथा राजा एवं रंक में भी प्रेम की स्निग्ध भावना का संचार होना आदि से भारतीय संस्कृति सदा ओत-प्रोत रही है। कर्ण द्वारा यह जानते हुए कि कवच कुण्डल ही उसके जीवन रक्षक हैं, उसका दान करना, यशोदशोला द्वारा कृष्ण के बदले अपने संतान को कंस रूपी मौत को समर्पित करना, नचिकेता द्वारा पिता की आज्ञा पालन हेतु स्वयं यमराज के पास जाना, एकलव्य द्वारा गुरूदक्षिणा के रूप में अपने अंगूठे का अर्पण करना आदि त्याग एवं दानषीलता के अत्यंत सुन्दर उदाहरण मिलते हैं। यह यहाँ की मिट्टी एवं पानी का ही प्रभाव है कि राखी के कच्चे बंधनों का फर्ज निभाने हेतु मुगल शासक हुमायूँ भी रानी कर्णवती की मदद के लिए भागा चला आया था।

यह पावन भूमि हिंदू, जैन, सिख, पारसी, इसाई आदि विविध धर्मों का प्रांगण रहा है। ये सभी इस मिट्टी में पुष्पित, पल्लवित हुए। सभी धर्मों एवं उसके अनुयायियों का पारस्परिक सम्मिश्रण और प्रभाव - प्रतिप्रभाव इस प्रकार हुआ कि लोग भले ही भिन्न-भिन्न भाषा बोलते हो, भिन्न-भिन्न सामाजिक रीति-रिवाजों का पालन करते हों, फिर भी सम्पूर्ण देश की लगभग एक ही समान जीवन पद्धति है। कभी-कभार के छिट-पुट आपसी वैमनस्य के बावजूद निःश्रेयस भाव से यहाँ सर्वधर्म एकता, सर्वधर्म आदर भाव, नैतिकता एवं राष्ट्रीयता का परचम लहराता रहा है। मिल्लत का मोमी शमादान सदा जलता रहा है।

प्राचीन भारत का यह चित्रण केवल उन लोगों के लिए प्रासंगिक नहीं है जो यह जानना चाहते है कि हमारे अतीत का उज्ज्वल स्वरूप क्या था बल्कि उन लोगों के लिए है जो देश की प्रगति में बाधाकारी

तत्त्वों को पहचानना चाहते हैं। अतीत के उदाहरण ने राम को सफल बनाया तो क्या हम उसी सद्गामी पथ से चलकर सौरव्यकारी भविष्य की सर्जना नही कर सकते ? यह हमारी आवश्यकता भी है कि जन गण मन एक बार पुनः अपने सद्गुण तेज पुंजी भूत कर एक दृढ़ कराल शक्ति उद्धृत करे, ताकि पतन एव अंधकार के सहस्त्रमुखी रावण को समूल नष्ट किया जा सके। त्रिगुणमयी प्रचण्ड शक्ति का द्योतक जन गण मन अपनी अन्तश्चेतना से वह दीप प्रज्वलित करे जिसके प्रकाश में दुनिया का समस्त अंधकार दूर जाये।

भारतीय संस्कृति का स्वरूप

भारतीय संस्कृति का स्वरूप अत्यंत विशाल, बहुआयामी और गहन आध्यात्मिक मूल्यों पर आधारित है, जिसने इसे विश्व की सर्वाधिक समृद्ध और प्राचीन संस्कृतियों में स्थान दिलाया है। इसका मूल आधार 'वसुधैव कुटुम्बकम्', 'सर्व धर्म समभाव', और 'अहिंसा' जैसे मानवीय सिद्धांतों पर टिका है, जो भारतीय जीवन-दर्शन की आत्मा को प्रकट करते हैं। भारतीय संस्कृति की अनूठी विशेषता इसकी विविधता में निहित एकता है, जिसके कारण अनेक भाषाओं, धर्मों, जातीय समूहों, परंपराओं और कलात्मक अभिव्यक्तियों के होते हुए भी समाज में सामंजस्य बना रहता है। यह संस्कृति केवल धार्मिक आस्थाओं तक सीमित नहीं, बल्कि सामाजिक व्यवहार, कला-संगीत, साहित्य, दर्शन, खानपान, वेशभूषा और लोक परंपराओं का समग्र रूप है।

भारतीय संस्कृति के स्वरूप में आध्यात्मिकता का गहरा स्थान है, जो मनुष्य को कर्तव्य, नैतिकता और आत्मिक विकास की ओर प्रेरित करती है। वेद, उपनिषद, पुराण, महाकाव्य और विभिन्न शास्त्रीय ग्रंथ इस सांस्कृतिक स्वरूप की वैचारिक नींव को मजबूत करते हैं। कला, नृत्य, संगीत और स्थापत्य की विविध शैलियाँ इसकी सृजनात्मकता और सौंदर्यबोध को दर्शाती हैं। साथ ही, इसका स्वरूप परिवर्तनशील भी है—समय के साथ नए विचार, तकनीक और सामाजिक बदलाव इसमें सहजता से समाहित होते रहे हैं, जिससे यह संस्कृति निरंतर प्रगतिशील बनी रही है।

भारत की सांस्कृतिक विरासत

भारत की सांस्कृतिक विरासत अपनी गहराई, व्यापकता और प्राचीनता के कारण अद्वितीय मानी जाती है। इसकी नींव उन प्राचीन ग्रंथों और ज्ञान-परंपराओं पर आधारित है, जिन्होंने मानव जीवन, दर्शन, विज्ञान, कला और समाज के विभिन्न पहलुओं को गहराई से प्रभावित किया। वेद, उपनिषद, पुराण, महाभारत और रामायण जैसे ग्रंथ केवल धार्मिक महत्व ही नहीं रखते, बल्कि नैतिकता, सामाजिक व्यवस्था, आध्यात्मिक चिंतन और मानव-मूल्यों के मार्गदर्शक भी हैं। भारत की दार्शनिक परंपरा—सांख्य, योग, वेदांत, न्याय, जैन, बौद्ध इत्यादि—ज्ञान की विविध धारणाओं का प्रतीक है, जिसने वैश्विक चिंतन को भी प्रभावित किया। इसी प्रकार भारतीय स्थापत्य कला और मूर्तिकला, जैसे मंदिर स्थापत्य, बौद्ध स्तूप, गुफा-

निर्माण, चोल, चालुक्य और मुगलकालीन वास्तुकला, देश की कलात्मक सृजनशीलता और शिल्पकला की श्रेष्ठता का प्रमाण हैं। भारतीय साहित्यिक परंपरा भी उतनी ही समृद्ध है, जिसमें संस्कृत साहित्य से लेकर तमिल, पाली, प्राकृत, हिंदी, बंगाली और अन्य भाषाओं के साहित्यिक कृतियों ने समाज की बौद्धिक धारा को दिशा दी है।

भारत की आध्यात्मिक विरासत और दर्शन इसकी सांस्कृतिक पहचान का सबसे गहन पक्ष है। भारतीय दर्शन मनुष्य के भीतर आत्मज्ञान, सह-अस्तित्व, अहिंसा, सत्य और कर्तव्य के सिद्धांतों को स्थापित करता है। योग, आयुर्वेद और ध्यान-परंपराएँ आज वैश्विक स्तर पर स्वीकार्य और सम्मानित हैं। भारत के सांस्कृतिक स्थलों—कुतुब मीनार, ताज महल, महाबोधि मंदिर, हम्पी, खजुराहो, अजंता-एलोरा—न केवल स्थापत्य कला की उत्कृष्टता को दर्शाते हैं, बल्कि ऐतिहासिक समय-चक्र की कहानी भी कहते हैं। इन विरासतों के संरक्षण के लिए पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग (ASI), यूनेस्को और विभिन्न राष्ट्रीय नीतियों का महत्वपूर्ण योगदान है। संरक्षण की ये पहलें सुनिश्चित करती हैं कि भारत की सांस्कृतिक धरोहर आने वाली पीढ़ियों तक सुरक्षित रूप से पहुँचे, तथा इसकी ऐतिहासिक और सांस्कृतिक महत्ता निरंतर उजागर होती रहे।

निष्कर्ष

समग्र रूप से, भारतीय संस्कृति अपनी बहुआयामी संरचना, ऐतिहासिक निरंतरता और निरंतर परिवर्तनशीलता के कारण विश्व की सबसे समृद्ध एवं जीवंत संस्कृतियों में गणित की जाती है। इसकी जड़ें गहरे आध्यात्मिक मूल्यों, सामाजिक संतुलन, नैतिक आदर्शों और मानव कल्याण के सिद्धांतों में निहित हैं, जिन्होंने इसे युगों-युगों तक प्रासंगिक बनाए रखा है। भारतीय समाज में धर्म, भाषा, कला, साहित्य, संगीत, नृत्य और जीवन-दर्शन की विविध परंपराएँ सह-अस्तित्व और सहिष्णुता को बढ़ावा देती हैं, जिसके कारण यह संस्कृति न केवल स्थायित्व बल्कि विस्तार की संभावनाएँ भी निरंतर संजोए रखती है। समय के साथ हुए सामाजिक, आर्थिक और तकनीकी परिवर्तनों ने इसकी संरचना में नए विचार, नवीन दृष्टिकोण और आधुनिकता के तत्व जोड़े हैं, फिर भी इसके मूल मूल्य और सांस्कृतिक धरोहर अपना वैभव बनाए हुए हैं। वैश्वीकरण के प्रभावों ने जहाँ भारतीय संस्कृति को विश्व पटल पर एक विशिष्ट पहचान प्रदान की है, वहीं अंतर-सांस्कृतिक आदान-प्रदान ने इसके विभिन्न पहलुओं को और अधिक सशक्त बनाया है। इसके बावजूद, संस्कृति के कुछ पारंपरिक तत्वों के संरक्षण, युवा पीढ़ी की बदलती सोच तथा पश्चिमी प्रभाव की तीव्रता जैसी चुनौतियाँ भी सामने आती हैं, जिन्हें समझदारी और संतुलन के साथ संबोधित करना आवश्यक है। अंततः भारतीय संस्कृति न केवल अतीत की विरासत है, बल्कि वर्तमान की पहचान और भविष्य के विकास का आधार भी है, जो विविधता में एकता, मानवीय मूल्यों और सतत परिवर्तन की अनूठी मिसाल प्रस्तुत करती है।

संदर्भ ग्रंथ:-

1. रामधारी सिंह दिनकर संस्कृति के चार अध्याय 1956, इलाहाबाद।
2. जय शंकर मिश्र - 2012 प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, पटना।
3. राजेन्द्र पाण्डेय 1983, भारत का सांस्कृति इतिहास, लखनऊ।
4. ब्लदेव उपाध्याय 1945, भारतीय दर्षन, वाराणसी।
5. हजारी प्रसाद द्विवेदी (1996). भारतीय संस्कृति के स्वरूप. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन।
6. रामशरण शर्मा (2004). भारत की सांस्कृतिक परंपराएँ और विकास. नई दिल्ली: पेपरबैक प्रकाशन।
7. आलोक राय (2010). भारतीय संस्कृति और सभ्यता का विकास. वाराणसी: भारती भवन।
8. डॉ. भगवत शरण उपाध्याय (1988). भारतीय संस्कृति का इतिहास. जयपुर: साहित्य संस्थान।